प्रो० मिथिला प्रसाद त्रिपाठी प्रणीत

भार्गवीयम्

(संस्कृत महाकाव्य)

प्रथम सर्ग

डॉ० तुलसीदास परौहा

भार्गवीयम

(संस्कृत महाकाव्य)

प्रो. मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी प्रणीत

भार्गवीयम्

(संस्कृत महाकाव्य)

प्रथम सर्ग

हिन्दी व्याख्याकार

डॉ. तुलसीदास परौहा

असिस्टेण्ट प्रोफेसर—संस्कृत विभाग

जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय

चित्रकूट उ.प्र.

राका प्रकाशन

इलाहाबाद

3

ISBN : 81-93-82182-06-1

कापीराइट :
लेखक

★

प्रथम संस्करण :
2012

★

प्रकाशक :
राका प्रकाशन
40 ए, मोतीलाल नेहरू रोड
इलाहाबाद–2, फोन : 2466791

★

बिक्री केन्द्र :
राका बुक शॉप
25 ए, महात्मा गाँधी मार्ग,
(कॉफी हाउस कैम्पस) सिविल
लाइन्स, इलाहाबाद–1

★

मूल्य : 60.00 रुपये

★

मुद्रक :
जे. के. आर्ट प्रेस; इलाहाबाद

प्राक्कथन

संस्कृत साहित्य जगत् में सदाचरणशील मनीषी के रूप में लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तित्वों में अन्यतम प्रो0 मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी संस्कृत वाङ्मय के विविध आयामों के नदीष्ण विद्वान् हैं। तपः स्वाध्यायशील प्रो0 त्रिपाठी जी सामान्य व्यक्तित्वों के लिए अत्यन्त कठिन दो विरोधी बिन्दुओं को एक साथ स्पर्श करने की क्षमता रखते हैं अर्थात् वह स्वभाव से जितने सरल सहज एवं अत्यन्त सामान्य ऋषितुल्य जीवन जीना जानते हैं, उसके ठीक उल्टे वह एक कुशल प्रशासक के रूप में आनुशासनिक कठोरता भी धारण करते हैं। विलक्षण प्रतिभा के धनी प्रो0 त्रिपाठी जी की सारस्वत साधना जहाँ प्राच्य मनीषाओं के लिए तोष का विषय है, तो वहीं समकालीन मनीषाओं के लिए एक मृदुल चुनौती भी है तथा वही भविष्यत्कालिक रचनाधर्मशील सारस्वत पथिकों के लिए पोषक पाथेय भी है। प्रो0 त्रिपाठी यदि भार्गवीयम् जैसे विशाल एवं महाकाव्योचित लक्षणों से युक्त महाकाव्य की रचना करके देश के सर्वोत्कृष्ट राष्ट्रीय पुरस्कार 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से पुरस्कृत होकर महाकवियों की अग्रिम पंक्ति में ससम्मान नियतोपस्थिति धारण करते हैं, तो वहीं अधिरघु जैसे लघुवर्णात्मक काव्य को लिखकर युगों–युगों तक स्मरण किये जाने वाले स्वर्णिम हस्ताक्षर बनकर अतुल्य मनीषी के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त करने का गौरव प्राप्त कर लेते हैं। देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में

कृतित्व पर अनेक शोधार्थियों ने शोधप्रबन्ध पूर्ण कर पी–एच0डी0 की उपाधि अर्जित की है, तथा सम्प्रति अनेकत्र शोधकार्यरत हैं।

संस्कृत साहित्य की अनुपम निधि 'भार्गवीयम्' महाकाव्य के प्रणेता प्रो0 मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी का जन्म म0प्र0 में रीवा जनपद के एक छोटे से गाँव भस्मा में 31 अगस्त 1950 को हुआ। आपकी प्राथमिक शिक्षा गाँव में ही सम्पन्न हुई। तथा उच्च शिक्षा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी उ0प्र0 में सम्पन्न हुई। आप संस्कृत एवं हिन्दी दोनो ही विषयों से स्नातकोत्तर है। आपने संस्कृत एवं हिन्दी विषय पर पी–एच0डी तथा डी0लिट् की उपाधि भी अ0प्र0 सिंह विश्वविद्यालय रीवा से ही अर्जित की है।

मौलिक संस्कृत रचनायें–

1. सतनामि गौरवम् (संस्कृत महाकाव्य)
2. भार्गवीयम् (संस्कृत महाकाव्य)
3. भावमाला (संस्कृत काव्य)
4. राष्ट्रशतकम् (संस्कृत काव्य)
5. केशवशतकम् (संस्कृत काव्य)
6. सपादशतकम् (संस्कृत काव्य)
7. शब्दांजलि, (संस्कृत काव्य)
8. माधवीयम् (संस्कृत काव्य)
9. मयंकशतकम् (संस्कृत काव्य)
10. भारतीमहिम्नः, स्तोत्रम्
11. हनुमन्महिम्नः स्तोत्रम्
12. जानकीमहिम्नः स्तोत्रम् आदि।

आपके निर्देशन में अब तक 30 से अधिक शोधार्थियों ने पी–एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की है।

पदस्थापना

आप देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर म0प्र0 में तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला विभाग में आचार्य एवं अध्यक्ष रहे हैं। आप सन् 09.01.2007 से 05.03.2010 तक कालिदास संस्कृत अकादमी उज्जैन के निदेशक तथा 30 अगस्त 2009 से महर्षि पतजलि संस्कृत भोपाल म0प्र0 के माननीय अध्यक्ष एवं 30 अगस्त 2011 से अद्यावधि महर्षि पाणिनि वैदिक एवं संस्कृत विश्वविद्यालय उज्जैन म0प्र0 के कुलपति पद पर कार्यरत हैं। जहां आप साहित्य साधना के साथ प्रशासनिक कार्यो की सम्पादन भी कुशलतापूर्वक कर रहें है।

भार्गवीयम् का संक्षिप्त परिचय

इक्कीसवीं सदी के संस्कृत महाकाव्यों में अन्यतम 'भार्गवीयम्' संस्कृतसाहित्य जगत् की एक विशिष्ट उपलब्धि है। महाकाव्योचित लक्षणों एवं प्रतिपाद्य विषय की भावपक्षीय एवं कलापक्षीय रचनाचातुरी से ओतप्रोत एवं मूल्यगर्भित यह रचना आमजनों के लिये भी उपादेय हो तदर्थ भी इसका एक व्यवस्थित साहित्यिक अध्ययन अपेक्षित है। कोई भी कवि व्यक्तिगत जीवन की अनुभूतियों, समकालीन परिस्थितियों तथा चुनौतीपूर्ण समस्याओं से प्रभावित हुए बिना काव्य रचना सम्पादित नहीं करता है, अतः भार्गवीयम् इस दृष्टि से आज का अध्येतव्य महाकाव्य है इस महान् रचनाग्रन्थ को साहित्य अकादमी नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2010 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत भी किया जा चुका है।

प्रो0 मिथिला प्रसाद त्रिपाठी का महाकाव्य 'भार्गवीयम 32 सर्गो में विभक्त है। तथा 1680 श्लोक है। इसके नायक परशुराम है। भृगुगोत्रीय ऋषियों के जीवनदर्शन पर केन्द्रित

इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में महर्षि भृगु का चरित्र, दूसरे सर्ग में च्यवन ऋषि के जन्म की कथा, तीसरे सर्ग मे च्यवन ऋषि का अलौकिक प्रभाव, चतुर्थ सर्ग में च्यवन जी का चरित्र, पंचम सर्ग में रूरू ऋषि का चरित्र, षष्ठ सर्ग में शुक्राचार्य जी का चरित्र, सप्तम सर्ग में मार्कण्डेयचरित, अष्टम सर्ग में दधीचि चरित, नवम में और्वचरित, दशम में जमदग्निकथा, एकादश में परशुराम जन्म कथा, द्वादश में परशुराम विद्याराधनकथा, तेरहवें में परशुराम पराक्रम, चतुर्दश मे परशुराम विद्यागम् पन्द्रहवें में जमदग्निकोप, सोलहवें में जमदग्निचरित, सप्तदश में परशुराम को पिता से आशीर्वाद की प्राप्ति, अष्टादश में कार्तवीर्य का चरित, नवदश में सुचन्द्र वध, बीसवें सर्ग में कार्तवीर्यवध, इक्कीसवें में गणपति की मित्रता, बाइसवें में जमदग्नि का संस्कार, तेईसवें में परशुराम की मित्रता, चौबीसवें में परशुराम क्षेत्र निर्माण, पच्चीसवें में परशुराम क्षेत्र वर्णन, छब्बीसवें में परशुराम कृतनवदेशनिर्माण, सत्ताईसवें में अम्बाचरित, अठाईसवें में, गुरुशिष्य संगर, उन्तीसवें में परशुराम विद्या प्रदान, तीसवें में श्रीविद्या ग्रहण, इकतीसवें में श्रीराम एवं परशुराम का समागम तथा बत्तीसवें सर्ग में परशुराम कृत श्री रामस्तुति वर्णित है।

भार्गवीयम् महाकाव्य पर हिन्दी व्याख्या लेखन का कार्य प्रगति पर है, चूँकि मेरे निर्देशन में 'भार्गवीयम् का साहित्यिक अनुशीलन' शीर्षक पर आधारित शोध कार्य ज0रा0 विकलांग विश्वविद्यालय में चल रहा है। शोधच्छात्रा श्रीमती संगीता देवी के काठिन्य निवारणार्थ तथा सारस्वत समर्चना का पुण्य प्राप्त करने के लोभ से मैने इस महाकाव्य की हिन्दी व्याख्या करने का निर्णय लिया। मुझे विश्वास है कि मैं शीर्घ ही सम्पूर्ण महाकाव्य की हिन्दी व्याख्या करने में तथा महाकवि के कथ्य को स्पष्ट करने में सफल होऊँगा।

यह हर्ष का विषय है कि इस महाकाव्य का प्रथम सर्ग महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट सतना म0प्र0 के एम0ए0 संस्कृत साहित्य के तृतीय प्रश्न पत्र के पाठ्य विषय के रूप में स्वीकृत है। मैं एतदर्थ परमादरणीया डॉ0 प्रज्ञा मिश्रा, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, म0गां0चि0ग्रा0वि0वि0, चित्रकूट के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिन्होने मेरे परिश्रम का उचित मूल्यांकन करते हुए हिन्दी व्याख्या सहित इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग को एम0ए0 संस्कृत साहित्य में पाठ्य ग्रन्थ के रूप में स्वीकृत करवाया है।

मैं सप्रणति आधमर्ण्य स्वीकार करता हूँ इस महाकाव्य के प्रणेता प्रो0 मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी कुलपति महर्षि पाणिनि वैदिक एवं संस्कृत विश्वविद्यालय, उज्जैन म0प्र0 का, जिन्होने मुझे हिन्दी व्याख्या लेखन की अनुमति प्रदान की है। मेरे इस कार्य में जिन गुरुकल्प मनीषियों एवं मित्रों का स्नेहिल मार्गदर्शन मिला है उन सभी के प्रति मैं कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

मैं अपनी इस लघुकृति को छात्र–छात्राओं को समर्पित करता हूँ।

विनयावनत

डॉ0 तुलासीदास परौहा

भार्गवीयम्

(संस्कृतमहाकाव्यम्)

प्रथमः सर्गः

श्रीर्यत्पदाम्बुजरजः परिसेवनाय
नित्याश्रयं च विदधाति युगान्तरेषु।
पित्रर्षिदेवविधिशम्भुभिरर्चिताय,
तस्मै नमो भृगुपदांकितविग्रहाय।। 1।।

भार्गवं भार्गवीं नत्वा भार्गवेशं च भार्गवान्।
भार्गवीयविबोधाय प्रभा व्याख्या विधीयते।।

अर्थात् श्री परशुरामजी को, श्रीलक्ष्मी की साक्षात् विग्रहस्वरूपा श्री जानकीजी एवं भार्गवेश श्रीराम जी को तथा भार्गवगोत्रीय महापुरुषों को प्रणाम करके प्रो0 मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी प्रणीत श्री भार्गवीयम् महाकाव्य के प्रतिपाद्य विषय का बोध कराने हेतु मेरे (डॉ0 तुलसीदास परौहा चित्रकूट) द्वारा प्रभा नामक हिन्दी व्याख्या का विधान किया जा रहा है।

अन्वय—श्रीः यत्पदाम्बुजरजः परिसेवनाय युगान्तरेषु नित्याश्रयं विदधाति च, तस्मै पित्रर्षिदेवविधिशम्भुभिः अर्चिताय भृगुपदांकितविग्रहाय नमः।

प्रभा—श्री लक्ष्मी जी, जिनके श्रीचरणकमलों के पराग का परिसेवन करने के लिये प्रत्येक युग में नित्य आश्रय ग्रहण करती हैं। उन पितृगणों, ऋषियों, देवताओं, ब्रह्माजी, एवं श्री शंकरजी द्वारा पूजित, श्री भृगुजी के दक्षिणपाद से अंकित वक्षःस्थल वाले प्रभु श्री नारायण को प्रणाम है।

विशेष—यहाँ महाकाव्यप्रणेता प्रो0 मिथिलाप्रसाद त्रिपाठी जी ने नमस्कारात्मक एवं वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण करके भृगुपदांकितविग्रहाय पद द्वारा ग्रन्थ के प्रतिपाद्य का संकेत किया है।

ब्रह्मण्यतो हरिपदं परिलभ्य लोके
यो राजसंसदि विभज्य पिनाकमुग्रम्।
सीतां श्रियं च निजचापमवाप भक्त्या,
रामस्तुतः स शरणं मम रामचन्द्रः ।। 2।।

अन्वय—यः (श्रीरामः) लोके ब्रह्मण्यतः हरिपदं परिलभ्य राजसंसदि उग्रम्, पिनाकम्, विभज्य सीतां, श्रियं, निजचापं च अवाप। सः भक्त्या रामस्तुतः रामचन्द्रः मम शरणम्। (अस्तु)

प्रभा—जिसने (प्रभुश्रीराम) इस संसार में वेदज्ञाननिष्णात सुसंस्कृत व्यक्तियों का सम्मान करने के कारण हरिपद प्राप्त किया है। अर्थात् हरति कष्टान् इति हरिः पदवाच्य हरि की पदवी प्राप्त की है, अथवा हरिः वानरेशः हनूमान् पदे यस्य अर्थात् श्रीहनूमान् का सेव्य होने का गौरव पाया है। अथवा हरिः सिंहः इव पदः पादन्यासः (विक्रमपूर्णः) यस्य तादृशं, सिंहसदृश पराक्रमी होने का सम्मान प्राप्त किया है तथा राजसंसद् (श्रीमिथिला नरेश द्वारा श्री सीतास्वयंवरार्थ आयोजित

धनुष यज्ञ समारोह में) सामान्यतया प्रत्यंचा न चढ़ा सकने योग्य पिनाक नामक शिवधनुष को सहज ही भग्न कर दिया है। फलतः श्री सीताजी को, विजयश्री को, तथा श्रीपरशुराम द्वारा समर्पित धनुष को प्राप्त किया है। वे ही श्री परशुराम जी द्वारा स्तुत, प्रभु श्री रामचन्द्र मेरी शरण हैं।

विशेष–प्रस्तुत श्लोक में मंगलाचरण ब्याज से कवि ने महाकाव्य के नायक परशुराम का संकेतात्मक परिचय दिया है।

काशीपतिः सुरनदी–शशिभूषितोऽपि
शेषेण भूषितजटानिचयः शिवोऽपि।
यस्यांघ्रिपद्ममकरन्दनिषेवणाय
विद्यागुरुः कपिरभूत्तमहं प्रपद्ये।। 3।।

अन्वय–यस्य अंघ्रिपद्ममकरन्दनिषेवणाय काशीपतिः शिवः सुरनदीशशिभूषितः अपि शेषेण भूषितजटानिचयः अपि विद्यागुरुः कपिः अभूत। तं अहं प्रपद्ये।

प्रभा–जिनके चरण कमलों के रस का आस्वादन करने के लिये श्री काशीपति भगवान् विश्वनाथ श्रीगंगाजी एवं चन्द्रमा से अलंकृत होने के बाद भी तथा शेषनाग द्वारा जटा समूहों के आवृत किये हुए होने पर भी विद्वानों में अग्रगण्य श्रीहनुमान् के रूप में अवतरित हुए हैं। उन प्रभु श्री ~~जानकी जीवन राम~~ शिव की शरण ग्रहण करता हूँ।

या रावणादिशमनाय सुरार्थिताऽभूत्
या मन्थराश्रिततया वरदानबुद्धिः।
रामानुजाननगताऽपि च चित्रकूटे
सा शारदा भवतु में रसनाग्रसंस्था।। 4।।

अन्वय–या रावणादिशमनाय सुरार्थिता अभूत्। या च मन्थराश्रिततया वरदानबुद्धिः (अभूत्) चित्रकूटे अपि (या) रामानुजाननगता (अभूत्) सा शारदा में रसनाग्रसंस्था भवतु।

प्रभा—जो रावण, कुम्भकर्ण खर आदि राक्षसों के विनाश के लिये देवताओं द्वारा प्रार्थित हुई मन्थरा के जिह्वाग्र में बैठकर कैकेयी द्वारा दो वरदान मंगवाया तथा श्री चित्रकूट धाम में (श्रीराम को अयोध्या वापस चलने के लिये) मनाने आये श्री भरत जी के मुख में बैठी, वे ही श्री सरस्वती जी मेरे (अभीष्ट सिद्धि हेतु) रसनाग्र में विराजें।

क्वाहं च मन्दमतिकः क्व कवेर्यशश्च
भृग्वन्वयार्णवमहो क्व च शेमुषी मे।
ध्यात्वाऽन्वयर्षिगुणरत्नमहं विलुब्धो
वांछामि पुण्यपुरुषाचरितानि चेतुम्।। 5।।

अन्वय—अहं मन्दमतिकः क्व? कवेः यशः च क्व? अहो भृग्वन्वयार्णवं क्व? मे शुमुषी च क्व? अन्वयर्षिगुणरत्नं ध्यात्वा विलुब्धः (च) अहं पुण्यपुरुषाचरितानि चेतुं वांछामि।

प्रभा—कहां मैं मन्द बुद्धि वाला और कहां महाकवियों का (उत्तम) यश? कहां तो भृगुवंशरूप महासागर और कहां मेरी (सामान्य) बुद्धि? पुनरपि भृगुवंश के महान् ऋषियों के उदात्त गुणरत्नों में विलुब्ध (मति) मैं (कवि) पुण्यवान् ज्ञानी पुरूषों द्वारा आचरित चरित को ही प्राप्त करने की इच्छा करता हूँ।

स्मृत्वा मुहुर्भृगुकुलं प्रभवानुवृत्तं
मोहाच्च संरचयितुं समभून्मनीषा।
यास्यामि कांचिदुपहासगतिं विचिन्त्य
नत्वा गुरून् विरचयामि च भार्गवीयम्।। 6।।

अन्वयः—(मम) मनीषा मुहुः भृगुकुलं स्मृत्वा (तस्य) प्रभवानुवृत्तं संरचयितुं समभूत् (एवं) मोहात् कांचिद् उपहासगतिं यास्यामिं (इति) विचिन्त्य च गुरून् नत्वा भार्गवीयं विरचयामि।

प्रभा–मेरी बुद्धि पुनः भृगुवंश का स्मरण कर उसके वंशानुवृत्त को काव्यबद्ध करने को उद्यत हुई। इस प्रकार मोहवश उद्यत मैं किसी उपहास गति को प्राप्त करूंगा ऐसा सोचकर मैं पुनः (अपने) गुरुजनों को प्रणाम करके भार्गवीयम् महाकाव्य की रचना करता हूँ।

अज्ञानजा अथ ससर्ज च पंचवृत्तीः
विघ्नान् विलोक्य प्रथमं स तताप वेधाः।
दध्यौ हरिं समधिगम्य मतिं सुपूतो
भूयः समारभत् मानसिकीं सिसृक्षाम्।। 7।।

अन्वय–अथ वेधाः अज्ञानजाः पंचवृतीः ससर्ज। (पश्चात्) विघ्नान् विलोक्य सः प्रथमं तताप। समधिगम्य मतिं हरिं दध्यौ। (पुनः) सुपूतः (सन्) भूयः मानसिकी सिसृक्षां समारभत्।

प्रभा–श्री नारायण के नाभिकमल से उत्पन्न श्री ब्रह्मा जी ने ईश्वर की अन्तः प्रेरणा (सृष्टिनिर्माणविषयक) प्राप्त करने के उपरान्त से उत्पन्न होने वाली पांच वृत्तियों (अन्धतामिस्र आदिकृत् महामोह, मोह) की सर्जना की। पश्चात् सृष्टि निर्माण प्रक्रिया में उन्हीं वृत्तियों द्वारा उद्भावित विभिन्न विघ्नों को देखकर पहले तपस्या करने का निर्णय लिया। उन्होंने समाधिस्थ होकर श्रीहरि का ध्यान किया पुनः तपः भूत अन्तःकरण वाले श्रीब्रह्मा ने मानसिक सृष्टि को प्रारंभ किया।

आद्यो मुनिः समभवत्सनकः कुमारः
पश्चात् सनन्दन सनातनयोर्विसृष्टिः।
तुर्यो मुनिर्भुवि बभौ च सनत्कुमारः
कामोर्ध्वरेतस इमे जगतो विरक्ताः ।। 8।।

अन्वय–भुवि आद्यः मुनिः सनकः कुमारः समभवत्। पश्चात् सनन्दनसनातनयोः विसृष्टिः (समभवत्) तुर्यः मुनिः सनत्कुमारः

वभौ। इमे (चत्वारोऽपि) जगतः विरक्ताः कामोर्ध्वरेतसः च (अभवन्)।

प्रभा—इस पृथ्वी में मानसी सृष्टि के क्रम में सर्वप्रथम सनक कुमार की उत्पत्ति हुई। पश्चात् सनन्दन एवं सनातन उत्पन्न हुए, तथा चौथे क्रम में सनत्कुमार नामक मुनि उत्पन्न हुए। ये चारों ही मुनि जगत् से विरक्त एवं ऊर्ध्वरेता हुए।

कौमारभावमधिगम्य भुवं भ्रमन्तो
गायन्त्यहर्निशमिमे हरये नमश्च।
लोकान् च पादरजसा सततं पुनानाः
श्रीवासुदेवचरणानुरता जयन्ति।। 9।।

अन्वय—इमे कौमारभावं अधिगम्य भुवं भ्रमन्तः च अहर्निशं हरये नमः (इति) गायन्ति। श्रीवासुदेवचरणानुरताः पादरजसा लोकान् सततं पुनानाः जयन्ति।

प्रभा—सनक, सनन्दन, सनातन एवं सनत्कुमार नामक मुनिगण कौमारावस्था में ही रहते हुए समस्त पृथ्वी में विचरण करते हुए तथा निरन्तर श्री हरये नमः ऐसा उच्चारण करते रहते हैं। इस प्रकार श्री वासुदेव विष्णु की भक्ति में अनुरक्त ये मुनिजन अपने चरणों की रज से संसार को सतत पवित्र करते हुए उत्कर्षशील है।

लोके प्रजाः सृजत वाचमलं निशम्य
धातुर्न तेऽवृणनजायत रोशदोषः।
बुध्या निगृह्य च शमाय कृतः प्रयत्नो
जातो भ्रुवोरथ रुरोद शिशुः स रुद्रः ।। 10।।

अन्वय—लोके प्रजाः सृजत (इति) धातुः वाचं अलं निशम्य ते (मुनयः) न अवृणन्। (तस्माद्) रोषदोषः अजायत। (तत्) शमाय बुध्या निगृह्य प्रयत्नः, कृतः। अथ भ्रुवोः जातः (यः) शिशु रुरोद स रुद्रः सः शिशुः रुदः रुरोद।

प्रभा–पृथ्वी पर तुम लोग प्रजा की सृष्टि करो ऐसा श्री ब्रह्मा जी का आदेश वाक्य सुनकर उन मुनियों ने उक्त आदेश को नहीं माना। जिससे श्री ब्रह्मा जी कुद्ध हो गये। क्रोध का प्रशमन करने के लिये बुद्धिबल से प्रयत्न किया। तभी कुद्धावस्था में ही उनकी भ्रुओं से एक शिशु का जन्म हो गया, जो अत्यधिक रोया वह रुद्र हुआ।

यो नीललोहितवपुर्विधिरोषमूर्ति–
र्नामास्पदं स पितरं समपृच्छदेव।
ब्रह्मापि सान्त्वयनमुं निभृतं तुतोष
रुद्रो हि रोदनकरस्य चकार नाम।। 11।।

अन्वय–य' विधिरोषमूर्तिः नीललोहिवपुः सः पितरं नामास्पदं एवं समपृच्छद्। ब्रह्मापि अमुं निभृतं सान्त्वयन् तुतोष। रोदनकरस्य हि रुद्रः नाम चकार।

प्रभा–वह जो श्री ब्रह्मा की साक्षात् क्रोध का मूर्तिमान् स्वरूप नीलवर्ण का शिशु था उसने अपने पिता श्रीब्रह्मा से अपना नाम पूछा। श्रीब्रह्माजी ने उसके सम्यक् सान्त्वना देकर प्रसन्न किया और अत्यधिक रोने के कारण उसका नाम रुद्र रखा।

खं वायुमग्निमसुमिन्द्रियमंशमन्तं
पृथ्वीं जलं च हृदयं शशिनं तपश्च।
स्थानानि धातुरुदितानि निवासहेतौ
रुद्रस्य साम्प्रतमपि प्रथितानि लोके।। 12।।

अन्वय–खं, वायुं, अग्निं, असुं, इन्द्रियं, अंशुमन्तं, पृथ्वीं, जलं, हृदयं, शशिनं, तपः च धातुः (एतानि) स्थानानि रुद्रस्य निवासहेतौ उदितानि (यानि) साम्प्रतं अपि लोके प्रथितानि (सन्ति)।

प्रभा—उस रुद्र के ग्यारह स्वरूप होने के कारण श्रीब्रह्माजी ने आकाश, वायु, अग्नि, प्राण, इन्द्रियाँ, सूर्य, पृथ्वी, जल, हृदय, चन्द्रमा और तपस्या इन ग्यारह स्थानों को रुद्र के निवासार्थ प्रदान किया जो आज भी संसार में विख्यात हैं।

मन्युर्मनुर्महिनसश्च महांछिवश्चा—
नेहा ऋताध्वज—धृतव्रत—वामदेवाः
नामान्यतन्वननिशं भव उग्ररेता
रुद्रस्य सृष्टिकरणाय तथैव नार्यः ।। 13।।

अन्वय—रुद्रस्य, मन्युः, मनुः महिनसः, महन् शिवः, नेहा, ऋतध्वजः धृतव्रतः, वामदेवाः, भवः, उग्ररेताः, (एतानि) नामानि अतन्वन्। अनिशं सृष्टिकरणाय तथैव नार्यः (अपि अजायन्त)।

प्रभा—उस रुद्र के एकादश स्वरूपों के मन्यु, मनु, महेशान, महान्शि, काल, ऋतध्वज, धृतव्रत, नामदेव, भव तथा उग्ररेता ये ग्यारह नाम रखे गये तथा सतत सृष्टि प्रक्रिया में क्रियाशील रहने के लिये ग्यारह नारियां (रुद्राणियाँ) भी उस रुद्र को दी गयीं।

धीरम्बिका नियुतसर्पिरिलोशनोमा
दीक्षा सुधा जगति वृत्तिरिरावती च।
रुद्राण्य एव विधिना रचिताश्च सृष्ट्यै
रौद्रीं समारभत सृष्टिरतः पृथिव्याम्।। 14।।

अन्वय—विधिना जगति सृष्ट्यै धीः, अम्बिका, नियुतसर्पिः, इला, उशना, उमा, दीक्षा, सुधा, वृत्तिः, इरावती, च (एताः) रुद्राण्य एव रचिताः। (सः रुद्रः) अतः पृथिव्यां रौद्रीं सृष्टिं समारभत्।

प्रभा—श्रीब्रह्मा जी जगत में सृष्टि के लिये धी, अम्बिका, नियुतसर्पि, इला, उशना, उमा, दीक्षा, वृत्ति, इरावती, तथा सुधा इन रुद्राणियों की रचना की। तथा रुद्रों को समर्पित किया

तथा रुद्रों ने मिलकर इस पृथ्वी में रौद्री सृष्टि का प्रारम्भ किया।

सत्वादिभिः समकरोच्च निजैर्निदेशात्
धातुः समाहितमतिर्विविधाः प्रजाश्च।
ता खादितुं भुवि रता अभवन् हि रौद्रीः
ब्राह्मी विसृष्टिमवलोक्य विधिः शुशोच।। 15।।

अन्वय–भुवि धातुः निदेशात् निजैः सत्वादिभिः समाहितमतिः विविधाः प्रजाः समकरोत्। ताः रौद्रीः ब्राह्मी विसृष्टिं खादितुं रताः अभवन्। हि विधिः अवलोक्य शुशोच।

प्रभा–इस पृथ्वी पर ब्रह्माजी ने स्वयं ही सत्वादि गुणों से युक्त बुद्धि द्वारा विविध सृष्टि की। किन्तु रुद्रों द्वारा उत्पन्न प्रजा उस सृष्टि का ही भक्षण करने लगी। इस प्रकार ब्रह्मीय सृष्टि के विनाश को देखकर श्रीब्रह्माजी अत्यन्त दुःखी हुए।

आहूय मिष्टवचसा ह्यभिनन्द्य रुद्रं
ब्रह्मा न्यवारयदमुं नवसर्जनाभ्यः।
भूत्यै समादिशदथो तपसे च रुद्रं
लोकोदयाय च हिताय सदा जनानाम्।। 16।।

अन्वय–ब्रह्मा रुद्रं मिष्टवचसा आहूय अभिनन्द्य च अमुं नवसर्जनाभ्यः न्यवारयत्। अथ जनानां भूत्यै लोकोदयाय हिताय च तपसे समादिशत्।

अथ–श्री ब्रह्माजी ने रुद्र (शिव) को मधुरवाणी से बुलाकर तथा उनका अभिनन्दन करके उन्हें नवीन सृष्टि (रौद्री सृष्टि) करने से रोका। पुनः प्राणियों के कल्याणार्थ, संसार के उत्कर्ष एवं हित के लिये तपस्या करने का आदेश (रुद्र को) दिया।

विष्णुश्च विश्वमभिपालयतीह नित्यम्
विश्वं विताय निखिलं त्वमासि प्रजेशः।

यद्यद् विभूतिसहितं तपसः फलं तत्
तस्मात् समाचार तपो भव सर्वपूज्यः।।17

अन्वय—विष्णुः इह नित्यं विश्वं अभिपालयति। त्वं प्रजेशः असि (अतः) निखिलं विश्वं विताय यद्—यद् विभूति सहितं तपसः फलं तस्मात् तत् तपः समाचर सर्वपूज्यः (च) भव।

प्रभा—श्री विष्णु इस सृष्टि में संसार का नित्य पालन करते हैं। तुम (रुद्र) प्रजा के स्वामी हो अतः इस सम्पूर्ण विश्व के कल्याणमय विस्तार के लिये अपेक्षित जो विशिष्ट कल्याण गर्भित तपस्या का फल है, उसे प्रदान करने के लिये तपस्या करो, तथा प्राणि मात्र के पूज्य देवता बनो।

विशेष—यहां सर्वपूज्यः पद से रुद्र का शंकर नाम गतार्थ है क्योंकि संसार के कल्याणार्थ तपोरत होने के कारण शं करोति (जगतः) इति शंकरः की गतार्थता सिद्ध है।

ज्योतिः परं सकलभूतगुहानिवासं
सर्वत्रगं शरणदं जगतामधीशम्।
विन्दन्ति विश्वभरणं च जनास्तपोभि—
स्तस्मात् समाचर तपो भव सर्वनिष्ठः।। 18।।

अन्वय—जनाः तपोभिः सकलभूतगुहानिवासं परं ज्योतिः सर्वत्रगं शरणदं विश्वभरणं जगतां अधीशं विन्दन्ति तस्मात् तपः समाचर सर्वनिष्ठः च भव।

प्रभा—तपस्या के द्वारा समस्त प्राणियों की अन्तःगुहा में निवास करने वाले परम् ज्योति (दिव्यतेज) स्वरूप, को जो सर्वत्र गतिक हैं, शरणागत को अभयदान देने वाले हैं विश्व का भरण—पोषण करने वाले हैं तथा सम्पूर्ण संसार के स्वामी हैं, उन परमात्मा को प्राप्त करते हैं, इसलिये तुम भी तपस्या करो, तथा सर्वनिष्ठ बनो।

रुद्रोऽभिगृह्य जनकस्य तपोनिदेशं
दावं गतस्तपसि गूढमतिर्महात्मा।
विद्यावबोधगुरुतां च समुह्य कालाद्
विद्यागुरुर्विजयते शिवशंकरोऽयम्।। 19।।

अन्वय–रुद्रः जनकस्य तपोनिदेशं अभिगृह्य दावं गतः। (सः) तपसि गूढमतिः महात्मा कालाद् विद्यावबोधगुरुतां च समुह्य अयं शिवशंकरः विद्यागुरुः विजयते।

प्रभा–वह रुद्र अपने पिता श्री ब्रह्मा जी का तप करने से सम्बन्धित आदेश स्वीकार करके वन चला गया। तपस्या में अनन्य मति वाले, उस महात्मा रुद्र ने सभी विद्याओं के ज्ञान की गुरुता को प्राप्त किया तथा संसार में यही शिवशंकर विद्यागुरु के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं।

विशेष–''विद्याकामः शिवं यजेत्'' इस भागवत वचन के अनुसार शिव को विद्या का अधिपति मानकर विद्या के इच्छुक को शिव उपासना करने का निर्देश है, अतएव कवि ने शिव को विद्या गुरू के रूप में प्रतिष्ठा दी है।

ध्यायन्नथ प्रजननं च विधिः सिसृक्षुः
शक्त्या युतो भगवतोऽभिससर्ज पुत्रान्।
लोकस्य संततिकरान् दशसंख्यकांश्च
येभ्योऽभिवृद्धिरभवज्जगतो विशिष्टा।। 20।।

अन्वय–भगवतः शक्त्या युतः सिसृक्षुः विधिः लोकस्य सन्ततिकरान् दशसंख्यकान् पुत्रान् अभिससर्ज। येभ्यः जगतः विशिष्टा अभिवृद्धिः अभवत्।

प्रभा–भगवान् श्री विष्णु की शक्ति से युक्त, जगत् की रचना करने के इच्छुक ब्रह्माजी ने संसार की सृष्टि रचना में सहभागी दश पुत्रों को उत्पन्न किया। जिनसे इस जगत् की विशिष्ट अभिवृद्धि हुई।

अत्रिः पुलस्यपुलहौ क्रतुरंगिरा च
दक्षो मरीचिरथ नारद एव जाताः।
संजीवनी व्रतधरो भृगुसंज्ञकोऽभूत्
विद्यासु निष्ठितवरिष्ठमतिर्वसिष्ठः।। 21।।

अन्वय–(तेषु) अत्रिः पुलस्यपुलहौ क्रतुः अंगिरा दक्षः मरीचिः नारदः एव जातां। अथ संजीवनीव्रतधरः भृगुसंज्ञकः अभूत्। विद्यासु निष्ठितवरिष्ठमतिर्वसिष्ठः च (अभूत्)।

प्रभा–उन दश पुत्रों में अत्रि, पुलस्त्य पुलह, क्रतु, अंगिरा, दक्ष, मरीचि और नारद उत्पन्न हुए। इसके बाद संजीवनीव्रत को धारण करने वाले महर्षि भृगु उत्पन्न हुए तथा विद्याओं में पारंगत बुद्धि वाले ब्रह्मर्षि वसिष्ठ उत्पन्न हुए।

उत्संगतो जनिरभूदिह नारदस्य
ह्यङ्गुष्ठतो जगति दक्षमुनिर्बभूव।
जातः क्रतुश्च करतोऽथ विधेस्तनूजो
नाभेरभूत् व्रतधरो पुलहो महर्षिः।। 22।

अन्वय–इहि जगति उत्संगतः नारदस्य जनिः अभूत्। हि अंगुष्ठतः दक्षमुनिः बभूव। करतः क्रतुः जातः अथ नाभेः व्रतधरः महर्षिः पुलहः तनूजः अभूत्।

प्रभा–इस संसार में श्री ब्रह्मा जी के उत्संग (गोद) से नारद का जन्म हुआ। अंगुष्ठ से दक्ष हुए। हाथ से क्रतु हुए तथा नाभि से व्रतधारी महर्षि पुलह पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए।

अक्ष्णोरथात्रिरपि कर्णभवः पुलस्त्यो
जातोऽङ्गिराऽपि मुखतो मनसो मरीचिः।
प्राणेभ्य आविरभवच्च वसिष्ठदेवस्
त्वग्जन्मभूरथ विधेश्च भृगोर्महर्षेः।। 23।।

अन्वय—अथ विधेः अक्ष्णोः अत्रिः अपि पुलस्त्यः कर्णभवः, मुखतः अंगिरा अपि जातः। मनसः मरीचिः वसिष्ठदेवः प्राणेभ्यः आविरभवत्। अथ भृगोः महर्षेः जन्म त्वग् जन्म अभूत्।

प्रभा—उसके उपरान्त ब्रह्माजी के आँख से अत्रि, कर्ण से पुलस्त्य, मुख से अंगिरा उत्पन्न हुए। मनस से मरीचि तथा प्राणों से वसिष्ठ आविर्भूत हुए। अनन्तर श्रीभृगु महर्षि का जन्म त्वचा से हुआ।

नाड्गेभ्य एव जननं निखिलाच्च देहाद्
धातुर्बभौ भुवि मुनेश्च भृगोर्विशिष्टम्।
योऽग्निं प्रशोध्य तपसाऽधिगतश्च विद्यां
संजीवनीमथ मृतान् समजीवयच्च।। 24।।

अन्वय—भुवि धातुः अड़ेभ्य एव न च निखिलाद् देहाद् भुनः भृगोः विशिष्टं जननं बभौ। य च अग्निं प्रक्षेभ्य तपस्या संजीवनीं विद्यार्माधगतः अथ च मृतान् समजीवयत्।

प्रभा—इस पृथ्वी पर श्री ब्रह्माजी के अंगों से ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण शरीर से ही महर्षि भृगु का विशिष्ट जन्म हुआ। जिसने अग्नि का प्रशोधन करके तपस्या से संजीवनी विद्या को प्राप्त किया। अनन्तर इस संजीवनी विद्या का उपयोग करके मृत प्राणियों को जीवित कर दिया।

देवासुरैरपि सुरेशमरुद्गणैश्च
विप्रैः शिवाजहरिभिश्च महर्षिभिश्च।
यस्यान्वयस्य मुनयोऽथ समा बभूवुः
बोधैस्तपोभिरधिका अभिवन्दिताश्च।। 25।।

अन्वय—यस्य अन्वयस्य मुनयो देवासुरैः अपि सुरेशमरुद्गणैःच शिवाजहरिभिः समाः बभूवुः महर्षिभिः विप्रैः च वोधैः तपोभिः अधिकाः अभिवन्दिताः च (वभूवुः)।

प्रभा–जिस महर्षि भृगु के कुल में गृहीतजन्मा मुनिगण देवो, असुरों, इन्द्र, वायु, शिव, ब्रह्मा, विष्णु की समता, ज्ञान एवं तपस्या बल से रखते थे तथा वेदज्ञ विप्रों एवं तपस्वी महर्षियों से वे सभी ज्ञान एवं तपस्या में अधिक थे एवं संसार में वन्दित थे।

ब्रह्मा पुरा वरुणयज्ञहुताशनाच्च
यं पावनं मुनिवरं प्रकटीचकार।
यस्मिन् कुले च्यवनशुक्रमृकण्डुमुख्या
जाताः स एव भृगुवंश इति प्रसिद्धः ।। 26।।

अन्वय–पुरा ब्रह्मा वरुणयज्ञहुताशनाच्च यं पावनं मुनिवरं प्रकटीचकार। यस्मिन् कुलेच्यवनशुक्रमृकण्डुमुख्याः जाताः स एव भृगुवंश इति प्रसिद्धः।

प्रभा–पुराकाल में श्री ब्रह्मा जी ने वरुणयज्ञाग्नि से जिस पवित्र मुनि श्रेष्ठ को प्रकट किया। जिसके वंश में च्यवन, शुक्राचार्य, मृकण्डु आदि प्रमुख ऋषि उत्पन्न हुए हैं। वही वंश भृगुवंश के नाम से संसार में प्रसिद्ध हैं।

और्वेण वेदशिरसा जमदग्निना च
रामेण वत्समुनिनाऽप्नवता तथैव।
सावर्ण्य–शौनक–मृकण्डुसुतैः प्रसिद्धो
लोक सदा विजयते भृगुवंश एव ।। 27।।

अन्वय–लोके और्वेण, वेदशिरसा, जमदग्निना, रामेण, वत्समुनिना, आप्नवता, तथैव सावर्ण्यशौनकमृकण्डुसुतैः प्रसिद्धः भृगुवंशः सदा विजयते।

प्रभा–इस संसार में और्व, वेदशिरा, जमदग्नि, परशुराम, वत्स, आप्नवान्, सावर्ण्य, शौनक, मार्कण्डेय आदि संतानों से प्रथित भृगुवंश की सदा जय हो।

सत्रे सरस्वतितटे त्रिसुरे सुयोग्यः
को बोद्धुमेव मुनिभिः प्रहितो महात्मा।
निश्चित्य विष्णुमधिदेवमगात् सभां यः
सोऽयं सदा विजयते भृगुवंशकर्ता।। 28।।

अन्वय–सरस्वतितटे सत्रे त्रिसुरे सुयोग्यः कः? (इति) बोद्धुं एव महात्मा (भृगुः) मुनिभिः प्रहितः। यः विष्णुं अधिदेवं निश्चित्य सभां अगात्। सः अयं भृगुवंशकर्ता सदा विजयते।

प्रभा–पुराकाल में सरस्वती नदी के किनारे के तट पर ऋषियों द्वारा आयोजित ब्रह्मसत्र में यज्ञपुरुष के रूप में आराध्य देवता, ब्रह्मा विष्णु एवं शंकर में से कौन हो? इसका निर्णय करने के लिये महर्षि भृगु ही ऋषियों द्वारा मनोनीत किये गये। महर्षि भृगु ने तीनों देवों का परीक्षण करने के लिये विष्णु को यज्ञ का अधिदेवता निश्चय करके ब्रह्मा की सभा में उपस्थित हुए। इस प्रकार विलक्षण प्रज्ञावान् भृगुवंश के कर्ता भृगु की जय हो।

ब्रह्माणमेत्य भृगुणा न कृतः प्रणामः
पुत्रं विलोक्य विहिताचरणाद् विरक्तम्।
मौनं चुकोप भृगुमाशु विधिर्भृगुश्च
यातः शिवं प्रति ततः सविशेषबुद्धिः।। 29।।

अन्वय–भृगुणाः ब्रह्माणं एत्य प्रणामः न कृतः (तस्य) विहिताचरणाद् विधिः विरक्तं मौनं पुत्रं विलोक्य चुकोप। सविशेषबुद्धिः भृगुः ततः आशु शिवं प्रति यातः।

प्रभा–महर्षि भृगु ने श्रीब्रह्माजी के निकट जाकर भी प्रणाम नहीं किया, श्री ब्रह्मा शिष्टाचार से विरत एवं मौन धारण किये हुए पुत्र को देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए। (विशिष्ट प्रयोजन की सिद्धि हेतु उक्त आचरण करने वाले) विशिष्ट बुद्धि सम्पन्न भृगु वहाँ से चलकर शीघ्र ही शिव के निकट गये।

आराद् विलोक्य भृगुमागतभाश्रमं स्वं
शम्भुस्तदा युगलबाहुविसारितः सन्।
उत्थाय भ्रातरममुं मिलितुं पुरस्ताद्
वेगेन चाचलदसौ शशिशेखरोऽपि।। 30।।

अन्वय—तदा शम्भुः स्वं आश्रमं आगतं भृगुं आराद् विलोक्य, उत्थाय च युगलबाहुविसारितः सन् उत्थाय पुरस्ताद् अमुं भ्रातरं मिलितुं वेगेन असौ शशिशेखरः अपि च अचलबत्।

प्रभा—तब भगवान् शंकर ने अपने आश्रम में आते हुए भृगु को दूर से ही देखा और आसन से उठकर दोनों बाहुएँ फैलायें हुए सामने आये हुए अपने भाई भृगु से मिलने के लिये तेजी से आगे बढ़े।

हालाहलं वहति कण्ठगतं शरीरे
धूलिं विलेपयति योऽथ चितागतां च।
नागावलीं च गजचर्म मुदा विधत्ते
धत्तूरसेवनरतः पिबतीह भङ्गाम्।। 31।।

अन्वय—यः कण्ठगतं हालाहलं वहति, शरीरे चितागतां धूलिं विलेपयति, अथ नागावलीं च गजचर्म मुदा विधन्ते इह धन्तूरसेवनरतः भङ्गां च पिबति।

प्रभा—जो शिव कण्ठ में हालाहल नामक विष को धारण करते हैं, शरीर में चिता की भस्म का विलेप करते हैं, सर्पो का हार तथा गजचर्म बहुत प्रसन्नता से धारण करते हैं, एवम् धत्तूर का सेवन करने के साथ ही भाँग भी पीते हैं।

लोलारुणाक्षिभृदयं भुवनं पुनाति
भूयो दिगम्बरतनुर्वसुदानशीलः।
अभ्यागतं सपदि भ्रातरमङ्कमालं
दातुशिवः समुदियात् च भृगुं नयज्ञम् ।। 32।।

अन्वय–अयं लोलारुणाक्षिभृद् दिगम्बरतनुः वसुदानशीलः भूयः भुवनं पुनाति। (सः) शिवः अभ्यागतं भ्रातरं नयज्ञं भृगुं सपदि अंकमालं दातुं समुदियात्।

प्रभा–यह लाल–लाल आंखों वाले, नंगे वदन वाले तथा सर्वदा अभीष्ट पदार्थ का दान करने वाले शिव इस संसार को पावन करते रहते हैं। वहीं शिव आये हुए लघुभ्राता एवं नीतिज्ञ भृगु को शीघ्र ही अपने बाहुओं में भर लेने के लिये आगे बढ़े।

त्वं तिष्ठ दूरमशुभानि तनौ विधत्से
न स्पृष्टुमेव विहितोऽसि दिगम्बरश्च।
स्नेहांचितं शिवमयं च मुनिर्न्यषेधीत्
चुक्रोध शम्भुरपि तिग्मविलोलनेत्रः।। 33।।

अन्वय–त्वं अशुभानि तनौ विधत्से च दिगम्बरः विहितः असि। (अतः) स्पृष्टुं न एव। (तस्माद्) दूरं तिष्ठ। (एवं) अयं मुनिः स्नेहांचितं शिवं न्यषेधीत्। तिग्म विलोलनेत्रः शम्भुः चुक्रोध।

प्रभा–(श्रीशिव को आगे आता देखकर भृगु ने कहा) तुम अपवित्र वस्तुएँ शरीर में धारण करते हो तथा सदा नंगे रहते हो। अतः मुझे स्पर्श नहीं कर सकते। अतः तुम दूर ही ठहरो। इस प्रकार भृगु ने भक्ति से आराधित शिव को रोका। जिससे तीक्ष्ण दृष्टि वाले शंकर कुद्ध हो गये।

जग्राह शूलमतिरोषतया प्रधावन्
लेभे न चातिरभसाऽपि भृगुंज वेन।
हन्तुं क्षमो न भवति स्म शिवोऽपि शान्तः
देवत्रयी भृगुवरेण परीक्षिताऽभूत्।। 34।।

अन्वय–शान्तः शिवः अपि अतिरोषतया शूलं जग्राह। प्रधावन् अतिरभसा जवेन भृगुं न लेभे। हन्तुं क्षमः न भवति स्म। भृगुवरेण देवत्रयी परीक्षिता अभूत्।

प्रभा—सर्वदा शान्त स्वभाव वाले शिव ने भी अत्यन्त कुद्ध होकर शूल उठा लिया तथा भृगु की ओर दौड़े। किन्तु अत्यन्त वेग से भाग रहे भृगु को वे नहीं पा सके। तथा मारने में भी समर्थ नहीं हो सके। इस प्रकार भृगुजी ने ब्रह्मा, शंकर एवं विष्णु इस देवत्रयी में दो का परीक्षण पूरा किया।

वैकुण्ठमेत्य शयने रमया समेतं
विष्णुं ददर्श भृगुरेव पदाऽहनत्तम्।
उद्बुध्य विष्णुरपि तं ददृशे मुनीन्द्रं
पर्यङ्कतो धरणिमेत्य कृतांजलिश्च।। 35।।

अन्वय—भृगुः वैकुण्ठं एत्य शयने रमया समेतं विष्णुं ददर्श। तं पदा आहनत्। विष्णुः अपि उद्बुध्य पर्यङ्कतः धरणिं एत्य कृतांजलिः तं मुनीन्द्रं ददृशे।

प्रभा—महर्षि भृगु ने वैकुण्ठं जाकर शेषशय्या में विश्राम कर रहे लक्ष्मी सहित श्री विष्णु को देखा और उनके वक्षः स्थल में दक्षिणपाद से प्रहार कर दिया। श्री विष्णु भी जागकर तथा शेषशय्या से उतर कर पृथ्वी पर खड़े हुए एवं हाथ जोड़कर उस मुनि को देखा।

ब्रह्मन् प्रसूनसुकुमार पदे त्वदीये
वक्षःस्थलेऽश्मसदृशे हननात् श्रमोऽभूत्।
पादौ विमृश्य नतिभिश्च तुतोष विप्रं
प्रीतो भृगुश्च हरिमेव वरं प्रमेने।। 36।।

अन्वय—प्रसूनसुकुमार ब्रह्मन् अश्मसदृशे वक्षःस्थले हननात् त्वदीये पदे श्रमः अभूत्। पादौ विमृश्य नतिभिः विप्रं तुतोष। प्रीतः भृगुः हरिं एवं वरं प्रमेने।

प्रभा—पुष्पसदृशसुकोमल ब्राह्मण देवता ! पत्थर की भांति कठोर वक्षःस्थल में पाद प्रहार करने से आपके पैरों में श्रम हो

गया है। (ऐसा कहते हुए) पैरों में गिरकर तथा प्रणामादि से विप्र (भृगु) को प्रसन्न किया। प्रसन्न हुए भृगु ने श्रीहरि से ही वर मांगा।

लक्ष्मीपति सकलदेवगणाधिपूज्यं
मत्वाऽऽययौ मुनिरयं खलु दीर्घसत्रम्।
व्यज्ञापयन्निजमतं मुनिवृन्दमध्ये
धन्यो भृगुर्जयति देवपरीक्षकोऽपि।। 37।।

अन्वय–अयं मुनिः खलु लक्ष्मीपतिं सकलदेवगणाधिपूज्यं मत्वा दीर्घसत्रम् आययौ। मुनिवृन्दमध्ये निजमतं अपि व्यज्ञापयन् देवपरीक्षकः भृगुः धन्यः जयति।

प्रभा–ये भृगु नामक मुनि लक्ष्मीपति विष्णु को सम्पूर्ण देवगणों द्वारा अधिपूज्य मानते हुए दीर्घ सत्र में वापस आ गये। मुनियों के बीच अपना अभिमत व्यक्त करते हुए विष्णु को ही सत्र का प्रमुख उपास्य देव माना। ऐसे देवों के परीक्षक महर्षि भृगु धन्य हैं उनकी जय हो।

दिव्या हिरण्यकशिपोस्तनया मुनीन्द्रं
प्रोद्वाह्य देवतनयान् रविसंख्यकांश्च।
प्रासूत चान्यललना दुहिता पुलोम्नः
ख्यातिः श्रियं च्यवनधातृ विधातृकांश्च।। 38।।

अन्वय–हिरण्यकशिपोस्तनया दिव्या मुनीन्द्रं प्रोद्वाह्य रविसंख्यकान् देवतनयान् प्रासूत। च अन्यललना पुलोम्नः दुहिता ख्यातिः श्रियं च्यवनधातृविधातृकान्। च (प्रासूत)।

प्रभा–हिरण्यकशिपु की पुत्री दिव्या ने महर्षि भृगु से विवाह करके बारह देवपुत्रों को उत्पन्न किया और एक दूसरी पत्नी पुलोमा की पुत्री ख्याति ने श्री, च्यवन, धाता एवं विधाता को उत्पन्न किया।

ज्येष्ठा सुता भगवती प्रबभूव लक्ष्मीः
नारायणं कृतवती स्वपतिं मनोज्ञा।
याऽऽम्भोधिमंथनभवा कमलालयासीत्
नारायणस्य हृदयेऽधिनिवासशीला।। 39।।

अन्वय–(अस्य) ज्येष्ठा सुता भगवती लक्ष्मीः प्रभूव। (या) मनोज्ञा नारायणं स्वपतिं कृतवती। या अम्भोधिमंथनभवा कमलालया आसीत्, सा (लक्ष्मीः) नारायणस्य हृदये अधिनिवासशीला अस्ति।

प्रभा–इन महर्षि की ज्येष्ठ पुत्री के रूप में भगवती लक्ष्मी उत्पन्न हुई। जिन मनोज्ञा ने श्री नारायण को अपना पति बनाया। जो समुद्रमन्थन से उत्पन्न हुई कमल में निवास करने वाली लक्ष्मी थीं। वे श्री नारायण के हृदय कमल में निवास करने लगी हैं।

संजीवनीव्रतधरो दनुजाधिपूज्यः
दिव्यात्मजो निखिलवेदपुराणविज्ञः।
शुक्रः कविर्भगवतः कविरूपमासीत्
लोके चकास्ति धृततारकमूर्तिरद्य।। 40।।

अन्वय–(यः) संजीवनीव्रतधरः दनुजाधिपूज्यः दिव्यात्मजः निखिलवेदपुराणविज्ञः कविः शुक्रः भगवतः कविरूपं आसीत्। (सः) अद्य लोके धृततारकमूर्तिः चकास्ति।

प्रभा–संजीवनी विद्या को धारण करने वाले, राक्षसराज से पूजित, भृगु जैसे दिव्य आत्मा से उत्पन्न, सम्पूर्ण वेदों एवं पुराणों के ज्ञाता, भगवान् का साक्षात् कविस्वरूप, कवि शुक्राचार्य थे। आज वहीं संसार में शुक्रतारा के रूपमें (जिसे भोर का तारा भी कहते हैं) प्रसिद्ध है।

श्रीनैमिषारण्यगतः कदाचित्
उग्रश्रवा सौतिरुपागतोऽभूत्।

पौराणिको द्वादशवर्षयाप्ये
सत्रे मुनीनामथ शौनकश्च।। 41।।

अन्वय–अथ कदाचित् मुनीनां द्वादशवर्षयाप्ये सत्रे पौराणिकः सौतिः उग्रश्रवाः श्रीनैमिषारण्यगतः अभूत्। च शौनकःउपागतः।

प्रभा–अनन्तर कभी (एक बार) मुनियों द्वारा आयोजित बारह वर्ष पर्यन्त चलने वाले सत्र में सूतपुत्र उग्रश्रवा श्रीनैमिषारण्य नामक तीर्थ में गये हुए थे और तब वहां श्री शौनक मुनि भी पहुंच गये।

हुतवहशरणस्थं शौनकं सुप्रभाते
बुधजनविनतांघ्रिं पूजने दत्तचित्तम्।
मुनिजनकृतशंकश्चाश्रमस्थोऽपि सौतिः
कुलपतिमभिकांक्षन् तत्र पौराणिकोऽपि।। 42।।

अन्वय–आश्रमस्थः अपि पौराणिकः मुनिजनकृतशंकः सौतिः सुप्रभाते पूजने दत्तचित्तं हुतवहशरणस्थं बुधजनविनतांघ्रिं कुलपतिं शौनकं अभिकांक्षन् (उपगतः)।

प्रभा–आश्रम में अवस्थित पुराणवेत्ता, मुनियों ने जिज्ञासाभाव से जिनसे अनेक शंकास्पद प्रश्न पूछे हैं ऐसे, श्रीसूतपुत्र उग्रश्रवा जी प्रातःकाल पूजन में दत्तचित्त, अग्निशाला में बैठे हुए, विद्वानों द्वारा पूजित पाद वाले कुलपति (दस हजार शिष्यों को निःशुल्क आवास, भोजन एवं शिक्षा प्रदान करने वाले) शौनक मुनि के निकट जिज्ञासावश गये।

ध्यात्वा परब्रह्म हुतं हुताशं
भास्वन्तमानर्च चकार चार्धम्।
श्रीशौनकः सौतिमुपेत्य वेद्यां
प्रीतः स्थितं स्वागत्मुज्जहार।। 43।

अन्वय–श्री शौनकः हुतं हुताशं परब्रह्म ध्यात्वा भास्वन्तं अर्धम् चकार च आनर्च। वेद्यां स्थितं सौतिं उपेत्य श्रीशौनकं स्वागतं उज्जहार।।

प्रभा–श्री शौनक जी ने (दैनिक) हवनादि कार्य सम्पन्न करके, परब्रह्म का ध्यान किया पुनः उदित हो रहे भगवान् भास्कर को अर्ध्य देकर उनकी अर्चना की। पश्चात् वेदी में बैठे हुए सूत्रपुत्र उग्रश्रवा के निकट जाकर उनका स्वागत (अतिथि–सत्कार) किया।

इति भार्गवेण त्रिपाठिना मिथिलाप्रसादेन विरचिते भार्गवीये भृगुचरितम् नाम प्रथमः सर्गः।

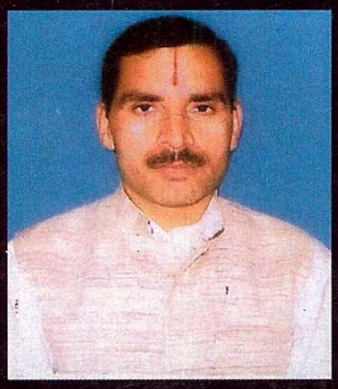

डॉ० तुलसीदास परौहा

सहायक प्राध्यापक : संस्कृत विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य विकलांग विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ.प्र.)

जन्म : डॉ० परौहा का जन्म मध्यप्रदेश के कटनी जिले में कैमूर पर्वत शृंखला की उपत्यका में अवस्थित बम्हौरी नामक ग्राम में १२ जून १९७१ ई. में हुआ।

शिक्षा : प्रथम कक्षा से स्नातकोत्तरपर्यन्त सभी परीक्षायें विशेषांको सहित प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण डॉ. परौहा ने अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा म.प्र. से आचार्य (नव्य व्याकरण) एवं एम.ए. (संस्कृत साहित्य) की उपाधि तथा महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट, जिला-सतना मध्य प्रदेश से पी.एच.डी. की उपाधि अर्जित की।

रचनायें :
- सङ्कर्षणचरितामृतम् (संस्कृतखण्डकाव्य)
- गीतभागीरथी (संस्कृतगीतकाव्य संग्रह)
- गीतमंदाकिनी (हिन्दीगीतकाव्यसंग्रह)
- श्रीसीताराममन्दिरविभवः (संस्कृतगीतकाव्य)
- श्रीचित्रकूटस्तवराजः (संस्कृतस्तोत्रकाव्य)
- जगद्गुरुस्वामीरामभद्राचार्य (हिन्दी शोधग्रन्थ)
- भाषा विज्ञान
- कालिदास
- संस्कृत काव्य परम्परा
- इतिहास पुराणों का परिचय